॥ संस्कृतसाहित्य में शिक्षण और संस्कृति ॥

डॉ.डायालाल मालदेभाई मोकरिया श्रीसोमनाथसंस्कृतयुनिवर्सिटी वेरावल, गुजरात

शिक्षण और संस्कृति एक दूसरे के साथ जुडी हुई है। मनुष्य शिक्षण प्राप्त करता है वह शिक्षण उनकी संस्कृति को प्रभावित करता है और मनुष्य की अपनी संस्कृति उनके शिक्षण को भी प्रभावित करती है। मनुष्य अपना जीवन अच्छी तरह से व्यतीत करे इसके लिए उनकी संस्कृति और शिक्षण का महत्त्वपूर्ण योगदान है।

शिक्षण का अर्थ केवल शाला-महाशाला अथवा विश्वविद्यालय में दिया जानेवाला पाठ्यपुस्तक आधारित ही नही है अपितु शिक्षण का अर्थ व्यापक है। मनुष्य अथवा कोई भी जीव जो कुछ अर्जित करता है। ज्ञान प्राप्त करता है वह सब शिक्षण कहा जाता है। महात्मा गांधी के मतानुसार बालकों का और मनुष्य मात्रका मन और आत्मा के उत्तम अंशो का प्रगटीकरण शिक्षण है। स्वामि विवेकानन्द के मतानुसार मानव की संपूर्ण व्यक्तिमत्ता का प्रकटीकरण शिक्षण है। डॉ.राधाकृष्णन् के मतानुसार जो मानव और समाज का निर्माण करता है वह शिक्षण है।

संस्कृति शब्द के लिए अंग्रेजी में कल्चर और सिविलिजेशन शब्दों का प्रयोग होता है। शुभ, शुद्ध अथवा सुसम्बन्ध करने की जो क्रिया है वह है संस्कार और जिसका भाव है संस्कारिता। देशगत या समाजगत संस्कारिता का व्यापक विस्तार है-संस्कृति।[1] संस्कृति शब्द का अर्थ व्याकरण की दृष्टि से देखेंगे तो 'सम्' उपसर्ग से पर सूट् आगम पूर्वक कृ धातु आगम करके जब 'क्तिन्' प्रत्यय किया जाता है तो संस्कृति शब्द व्युत्पन्न होता है। जिसका शाब्दिक अर्थ है अलंकृति सम्यक् कृति अथवा चेष्टा। अर्थात् जिन कृतियों एवं चेष्टाओं से मानव अपने जीवन के सभी क्षेत्रों मे उन्नति करता हुआ आनन्दप्राप्ति की व्यवस्था करता है, उसकी संज्ञा संस्कृति है।[2] संस्कृति के बारे में अनेक समाजशास्त्रीयोंने अपने विचार दिए है[3] यथा बोगार्डस् अनुसार संस्कृति एक संबद्ध रीति-रिवाजों परंपराओं और चालू व्यवहार-प्रतिमानों से बनती है। संस्कृति एक समूह का मूल धन है। वह मूल्यों की एक एसी पूर्ववर्ती सृष्टि हैं जिसमें प्रत्येक व्यक्ति पैदा होते है। यह एक माध्यम है जिसमें व्यक्ति पैदा होते है और विकसित होते है। संस्कृति की ए.डबल्यु. ग्रीन, मैकाईवर और पेज आदिने भी व्याख्या दी है। संक्षेप में कहे तो मनुष्य अपने समाज से जो कुछ सिखता है वह सबकुछ संस्कृति मे शामिल है।

भारतीय समाज में तपोवन में जो शिक्षण दिया जाता था वह शिक्षण दिव्य था। वह शिक्षण समाज के लिए सुखशान्ति वर्धक था। प्राचीन काल से ही हमारे ऋषिमुनि, लोगों के प्रति समानभाव रखने का शिक्षण देते आये है। यथा यजुर्वेद के ऋषि दर्शन करते है कि--

चर्मकारेभ्यो नमो, रथकारेभ्यो नमो कुलालेभ्यो नमो।[4] अर्थात् समाज की सुख-शान्ति और समृद्धि के लिए आवश्यकता पूर्ति करने के लिए रथकार चर्मकार आदि सब वन्दनीय है। हमारी संस्कृति का प्रमुख ध्येय सब को सुख की प्राप्ति हो सके यथा -

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत्॥[5]

यहाँ ऋषिने सब के लिए सुख, स्वास्थ्य और कल्याण की कामना की है किसी को भी दुःख न प्राप्त हो।

वैदिक साहित्य की तरह हमारे रामायण महाभारत, पुराण, इतिहास, काव्य आदिग्रन्थों में भी संस्कृति का शिक्षण दिया है। रामायण में आदर्श कुटुम्ब व्यवस्था काव्य के माध्यम से प्रस्तुत की है और महाभारत में मनुष्यधर्म का सांगोपांग वर्णन प्रस्तुत हुआ है। महाभारत के ही भाग श्रीमद्भगवद् गीता में तो भगवान् श्री कृष्ण अर्जुन को माध्यम बनाकर कहते है कि-

Scanned with CamScanner

स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः नरः संसिद्धिं लभते नरः ।[१] अर्थात् मनुष्य अपना कर्तव्य निभाकर हि सिद्धि को प्राप्त करता है। इसलिए भगवान् आगे भी कहते है कि

स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः ।[३]

अर्थात् मनुष्य को अपना कर्तव्यरूप धर्म निभाने में कितना भी कष्ट प्राप्त हो तो भी छोड़ना नहीं और दुसरे के धर्ममें चंचुपात नहीं करना चाहिए।

हमारे स्मृतिग्रन्थो में तो स्पष्टरूप से जीवन जीने का उत्तम शिक्षण दिया है। इसलिए तु कहा है कि-धर्मो रक्षति रक्षितः। पुराणों में भी कथा के माध्यम से दिव्य संस्कृति को ओर संकेत किया है।

महाकवि कालिदास, बाणभट्ट, भवभूति, भारवि, भास जैसे कविओंने तो काव्य को माध्यम बनाकर शिक्षण की जो बात की है वह आज के जमाने भी उपकारक है। महाकवि कालिदास तो उत्तम शिक्षक की भी परिभाषा देते हुये कहते हैं कि-

शिष्ट क्रिया कस्यचिदात्मसंस्था संक्रान्तिरन्यस्य विशेषयुक्ता।
यस्योभयं साधु च शिक्षकाणां धुरि प्रतिष्ठापयितव्य एव ॥[८]

जो शिक्षक ज्ञानी हो और ज्ञानका संक्रमण भी छात्रो में अच्छी तरह से कर सकता है वह उत्तम शिक्षक है। छात्र के बारे में भी कहा है कि –

पात्रविशेषे न्यस्तं गुणान्तरं व्रजति शिल्पमाधातुः।
जलमिव समुद्रशुक्तौ भुक्तफलतां पयोदस्य ॥[९]

उत्तमपात्र को दिया हुआ ज्ञान विशेषरूप से प्रकाशित होता है।

आधुनिक युगमें शिक्षण की परिभाषा बदल गई है इसलिए संस्कृति में भी बदलाव आया है। प्राचीनकाल का सुखीजीवन उनकी संस्कृति पर निर्भर था और संस्कृति तत्कालीन शिक्षण को देन थी। संस्कृति को बनाये रखनें में शिक्षण का महत्त्वपूर्ण योगदान है। इसलिए शिक्षण और संस्कृति का सत्व सदैव बनाये रखना चाहिए।

॥ सन्दर्भ ॥

१. संस्कृति की मीमांसा, कल्याणाङ्क, पृ.-३९५ (डॉ. श्रीजयेन्द्र राय)
२. महाभारत में भारतीय संस्कृति, पृ.-१
३. समाज मनोविज्ञान, पृ.२०६,२०७
४. शुक्लयजुर्वेदः, १७/३४
५. श्वेताश्वतरोपनिषद्, शान्तिमन्त्रः
६. श्रीमद्भगवद्गीता, १८/४५
७. श्रीमद्भगवद्गीता, ३४/३५
८. मालविकाग्निमित्रम्, १/१६
९. मालविकाग्निमित्रम्, १/६

Scanned with CamScanner